अध्याय-२०

श्री काकासाहेब की नौकरानी द्वारा श्री दासगणु की समस्या का विलक्षण समाधान, अद्वितीय शिक्षा पद्धति, ईशोपनिषद् की शिक्षा।

श्री काकासाहेब की नौकरानी द्वारा श्री दासगणु की समस्या किस प्रकार हल हुई, इसका वर्णन हेमाडपंत ने इस अध्याय में किया है।

प्रारम्भ

श्री साई मूलतः निराकार थे, परन्तु भक्तों के प्रेमवश ही वे साकार रूप में प्रकट हुए। माया रूपी अभिनेत्री की सहायता से इस विश्व की वृहत् नाट्यशाला में उन्होंने एक महान् अभिनेता के सदृश अभिनय किया। आओ, श्री साईबाबा का ध्यान व स्मरण करें और फिर शिरडी चलकर ध्यानपूर्वक मध्याह्न की आरती के पश्चात् का कार्यक्रम देखें। जब आरती समाप्त हो गई, तब श्री साईबाबा ने मस्जिद से बाहर आकर एक किनारे खड़े होकर बड़ी करुणा तथा प्रेम के साथ भक्तों को उदी वितरण की। भक्त गण भी उनके समक्ष खड़े होकर उनकी ओर निहारकर चरण छूते और उदी वितरण का आनंद लेते थे। बाबा दोनों हाथों से भक्तों को उदी देते और अपने हाथ से उनके मस्तक पर उदी का टीका लगाते थे। बाबा के हृदय में भक्तों के प्रति असीम प्रेम था। वे भक्तों को प्रेम से सम्बोधित करते, ''ओ भाऊ! अब जाओ, भोजन करो। अण्णा! तुम भी अपने घर जाओ। बापू! तू भी जा और भोजन कर।'' इसी प्रकार वे प्रत्येक भक्त से सम्भाषण करते और उन्हें घर लौटाया करते थे। अहा! क्या दिन थे वे जो अस्त हुए तो ऐसे कि फिर इस जीवन में कभी न मिलें! यदि तुम कल्पना करो तो अभी भी उस आनन्द का अनुभव कर सकते हो। अब हम साई की आनन्दमयी मूर्ति का ध्यान कर नम्रता, प्रेम और आदरपूर्वक उनकी चरणवन्दना कर इस अध्याय की कथा आरम्भ करते हैं।

ईशोपनिषद्

एक समय श्री दासगणु ने ईशोपनिषद् पर टीका (ईशावास्य-भावार्थबोधिनी) लिखना प्रारम्भ किया। वर्णन करने से पूर्व इस उपनिषद् का संक्षिप्त परिचय भी देना आवश्यक है। इसमें वैदिक संहिता के मंत्रों का समावेश होने के कारण इसे 'मन्त्रोपनिषद्' भी कहते हैं और साथ ही इसमें यजुर्वेद के अंतिम (४० वें) अध्याय का अंश सम्मिलित होने के कारण यह वाजसनेयी (यजुः) संहितोपनिषद् के नाम से भी प्रसिद्ध है। वैदिक संहिता का समावेश होने के कारण इसे उन अन्य उपनिषदों की अपेक्षा श्रेष्ठतर माना जाता है, जो कि ब्राह्मण और आरण्यक (अर्थात् मन्त्र और धर्म) इन विषयों के विवरणात्मक ग्रंथ की कोटि में आते हैं। इतना ही नहीं, अन्य उपनिषद् तो केवल ईशोपनिषद् में वर्णित गूढ़ तत्वों पर ही आधारित टीकायें हैं। पण्डित सातवलेकर द्वारा रचित वृहदारण्यक उपनिषद् एवं ईशोपनिषद् की टीका प्रचलित टीकाओं में सबसे श्रेष्ठ मानी जाती है।

प्रोफेसर आर.डी. रानाडे का कथन है कि ईशोपनिषद् एक लघु उपनिषद् होते हुए भी, उसमें अनेक विषयों का समावेश है, जो एक असाधारण अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है। इसमें केवल १८ श्लोकों में ही आत्मतत्त्ववर्णन, एक आदर्श संत की जीवनी, जो आकर्षण और कष्टों के संसर्ग में भी अचल रहता है, कर्मयोग के सिद्धान्तों का प्रतिबिम्ब, जिसका बाद में सूत्रीकरण किया गया तथा ज्ञान और कर्त्तव्य के पोषक तत्त्वों का वर्णन है, जिसके अन्त में आदर्श, चामत्कारिक और आत्मासंबंधी गूढ़ तत्त्वों का संग्रह है।

इस उपनिषद् के संबंध में संक्षिप्त परिचय से स्पष्ट है कि इसका प्राकृत भाषा में वास्तविक अर्थ सहित अनुवाद करना कितना दुष्कर कार्य है। श्री दासगणु ने ओवी छन्दों में अनुवाद तो किया, परन्तु उसके सार तत्व को ग्रहण न कर सकने के कारण उन्हें अपने कार्य से सन्तोष न हुआ। इस प्रकार असंतुष्ट होकर उन्होंने कई अन्य विद्वानों से शंका-निवारणार्थ परामर्श और वादविवाद भी किया, परन्तु समस्या पूर्ववत् जटिल ही बनी रही और सन्तोषजनक भावार्थ करने में कोई भी सफल न हो सका। इसी कारण श्री दासगणु बहुत ही असंतुष्ट हुए।

केवल सद्गुरु ही अर्थ समझाने में समर्थ

यह उपनिषद् वेदों का महान् विवरणात्मक सार है। इस अस्त्र के प्रयोग से जन्म-मरण का बन्धन छिन्न-भिन्न हो जाता है और मुक्ति की प्राप्ति होती है। अत: श्री दासगणु को विचार आया कि जिसे आत्मसाक्षात्कार हो चुका हो, केवल वही इस उपनिषद् का वास्तविक अर्थ कर सकता है। जब कोई भी उनकी शंका का निवारण न कर सका तो उन्होंने शिरडी जाकर बाबा के दर्शन करने का निश्चय किया। जब उन्हें शिरडी जाने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ तो उन्होंने बाबा से भेंट की और चरण-वन्दना करने के पश्चात् उपनिषद् में आई हुई कठिनाईयाँ उनके समक्ष रखकर उनसे हल करने की प्रार्थना की। श्री साईबाबा ने आशीर्वाद देकर कहा कि, ''चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं। उसमें कठिनाई ही क्या है? जब तुम लौटोगे तो विलेपार्ला में काका दीक्षित की नौकरानी तुम्हारी शंका का निवारण कर देगी।'' उपस्थित लोगों ने जब ये वचन सुने तो वे सोचने लगे कि बाबा केवल विनोद ही कर रहे हैं, और कहने लगे कि क्या एक अशिक्षित नौकरानी भी ऐसी जटिल समस्या हल कर सकती है? परन्तु दासगणु को तो पूर्ण विश्वास था कि बाबा के वचन कभी असत्य नहीं हो सकते, क्योंकि बाबा के वचन तो साक्षात् ब्रह्मवाक्य ही हैं।

काका की नौकरानी

बाबा के वचनों में पूर्ण विश्वास कर वे शिरडी से विलेपार्ला (बम्बई के उपनगर) में पहुँचकर काका दीक्षित के यहाँ ठहरे। दूसरे दिन दासगणु सुबह की मीठी नींद का आनन्द ले रहे थे, तभी उन्हें एक निर्धन बालिका के सुन्दर गीत का स्पष्ट और मधुर स्वर सुनाई पड़ा। गीत का मुख्य विषय था - एक लाल रंग की साड़ी वह कितनी सुन्दर थी, उसका ज़री का आँचल कितना बढ़िया था, उसके छोर और किनारें कितने सुन्दर थे, इत्यादि। उन्हें वह गीत अति रुचिकर प्रतीत हुआ। इस कारण उन्होंने बाहर आकर देखा कि यह गीत एक बालिका-नाम्या की बहन - जो काकासाहेब दीक्षित की नौकरानी है - गा रही है। बालिका बर्त्तन माँज रही थी और केवल एक फटे कपड़े से तन

ढँके हुए थी। इतनी दरिद्र परिस्थिति में भी उसकी प्रसन्न-मुद्रा देखकर श्री दासगणु को दया आ गई और दूसरे दिन श्री दासगणु ने श्री एम्.व्ही. प्रधान से उस निर्धन बालिका को एक उत्तम साड़ी देने की प्रार्थना की। जब रावबहादुर एम्.व्ही. प्रधान ने उस बालिका को एक धोती का जोड़ा दिया, तब एक क्षुधापीड़ित व्यक्ति को जैसे भाग्यवश मधुर भोजन प्राप्त होने पर प्रसन्नता होती है, वैसे ही उसकी प्रसन्नता का पारावार न रहा। दूसरे दिन उसने नई साड़ी पहनी और अत्यन्त हर्षित होकर नाचने-कूदने लगी एवं अन्य बालिकाओं के साथ वह फुगड़ी खेलने में मग्न रही। अगले दिन उसने नई साड़ी सँभाल कर सन्दूक में रख दी और पूर्ववत् फटे-पुराने कपड़े पहनकर आई, फिर भी पिछले दिन के समान ही प्रसन्न दिखाई दी। यह देखकर श्री दासगणु की दया आश्चर्य में परिणत हो गई। उनकी ऐसी धारणा थी कि निर्धन होने के ही कारण उसे फटे चिथड़े कपड़े पहनने पड़ते हैं, परन्तु अब तो उसके पास नई साड़ी थी, जिसे उसने सँभाल कर रख लिया और फटे कपड़े पहनकर भी उसी गर्व और आनन्द का अनुभव करती रही। उसके मुख पर दुःख या निराशा का कोई निशान भी नहीं रहा। इस प्रकार उन्हें अनुभव हुआ कि दुःख और सुख का अनुभव केवल मानसिक स्थिति पर निर्भर है। इस घटना पर गूढ़ विचार करने के पश्चात् वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भगवान ने जो कुछ दिया है, उसी में समाधान वृत्ति रखनी चाहिए और यह निश्चयपूर्वक समझना चाहिए कि वह सब चराचर में व्याप्त है, और जो भी स्थिति उसकी दया से प्राप्त है, वह अपने लिये अवश्य ही लाभप्रद होगी। इस विशिष्ट घटना में बालिका की निर्धनावस्था, उसके फटे पुराने कपड़े और नई साड़ी देने वाला तथा उसकी स्वीकृति देने वाला, ये सब ईश्वर द्वारा ही प्रेरित था। श्री दासगणु को उपनिषद् के पाठ की प्रत्यक्ष शिक्षा मिल गई अर्थात् जो कुछ अपने पास है, उसी में समाधानवृत्ति माननी चाहिए। सार यह है कि जो कुछ होता है, सब उसी की इच्छा से नियंत्रित है, अतः उसी में संतुष्ट रहने में हमारा कल्याण है।

अद्वितीय शिक्षापद्धति

उपर्युक्त घटना से पाठकों को विदित होगा कि बाबा की पद्धति

अद्वितीय और अपूर्व थी। बाबा शिरडी के बाहर कभी नहीं गए, परन्तु फिर भी उन्होंने किसी को मच्छिन्द्रगढ़, किसी को कोल्हापुर या सोलापुर साधनाओं के लिये भेजा। किसी को दिन में और किसी को रात्रि में दर्शन दिये। किसी को काम करते हुए, तो किसी को निद्रावस्था में दर्शन दिये और उनकी इच्छाएँ पूर्ण कीं। भक्तों को शिक्षा देने के लिये उन्होंने कौन कौन-सी युक्तियाँ काम में लाईं, इसका वर्णन करना असम्भव है। इस विशिष्ट घटना में उन्होंने श्री दासगणु को विलेपार्ला भेज कर वहाँ उनकी नौकरानी द्वारा समस्या हल कराई। जिनका ऐसा विचार हो कि श्री दासगणु को बाहर भेजने की आवश्यकता ही क्या थी, क्या वे स्वयं नहीं समझा सकते थे? उनसे मेरा कहना है कि बाबा ने उचित मार्ग ही अपनाया। अन्यथा श्री दासगणु किस प्रकार एक अमूल्य शिक्षा उस निर्धन नौकरानी व उसकी साड़ी द्वारा प्राप्त करते, जिसकी रचना स्वयं साई ने की थी।

ईशोपनिषद् की शिक्षा

ईशोपनिषद् की मुख्य देन नीति-शास्त्र सम्बधी उपदेश है। हर्ष की बात है कि इस उपनिषद् की नीति निश्चित रूप से आध्यात्मिक विषयों पर आधारित है, जिसका इसमें वृहत् रूप से वर्णन किया गया है। उपनिषद् का प्रारम्भ ही यहीं से होता है कि समस्त वस्तुएँ ईश्वर से ओत-प्रोत हैं। यह आत्मविषयक स्थिति का भी एक उपसिद्धान्त है; और जो नीतिसंबंधी उपदेश उससे ग्रहण करने योग्य है, वह यह है कि जो कुछ ईशकृपा से प्राप्त है, उसमें ही आनन्द मानना चाहिए और दृढ़ भावना रखनी चाहिए कि ईश्वर ही सर्वशक्तिमान् है और इसलिए जो कुछ उसने दिया है, वही हमारे लिये उपयुक्त है। यह भी उसमें प्राकृतिक रूप से वर्णित है कि पराये धन की तृष्णा की प्रवृत्ति को रोकना चाहिए। सारांश यह है कि अपने पास जो कुछ है, उसी में सन्तुष्ट रहना, क्योंकि यही ईश्वर की इच्छा है। चरित्र सम्बंधी द्वितीय उपदेश यह है कि कर्त्तव्य को ईश्वरेच्छा समझते हुए जीवन व्यतीत करना चाहिए, विशेषत: उन कर्मों को जिनको शास्त्र में वर्णित किया गया है। इस विषय में उपनिषद् का कहना है कि आलस्य से आत्मा

का पतन हो जाता है और इस प्रकार निरपेक्ष कर्म करते हुए जीवन व्यतीत करने वाला ही अकर्मण्यता के आदर्श को प्राप्त कर सकता है। अन्त में कहा कि जो सब प्राणियों को अपना ही आत्मस्वरूप समझता है तथा जिसे समस्त प्राणी और पदार्थ आत्मस्वरूप हो चुके हैं, उसे मोह कैसे उत्पन्न हो सकता है। ऐसे व्यक्ति को दु:ख का कोई कारण नहीं हो सकता।

सर्वभूतों में आत्मदर्शन न कर सकने के कारण भिन्न-भिन्न प्रकार के शोक, मोह और दु:खों की वृद्धि होती है। जिसके लिये सब वस्तुएँ आत्मस्वरूप बन गई हों, वह अन्य सामान्य मनुष्यों का छिद्रान्वेषण क्यों करे?

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु॥